|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 10: विभूतियोग

3/3 (श्लोक 22-42), शनिवार, 27 जनवरी 2024

विवेचक: गीता विशारद डॉ आशू जी गोयल

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/C4l8nJR294o

श्रीभगवान की अनन्त दैवीय विभूतियाँ

पारम्परिक दीप प्रज्वलन, सरस्वती वन्दना, गुरु वन्दना, भगवान श्रीकृष्ण की आरती, सियावर रामचन्द्र के जयघोष के साथ आज का विवेचन सत्र आरम्भ हुआ।

आजकल पूरा देश राममय हो रहा है। गीता परिवार को भी प्राण प्रतिष्ठा महोत्सव में एक अद्भुत विभूतिपूर्ण सेवा मिली। जो सेवा में भी विभूति है ऐसी वह पादुका सेवा है और यह सेवा कार्य सभी कार्यकर्ताओ ने बड़ी प्रसन्नता व अंत:करणपूर्वक पूर्ण किया और सभी सन्तों का आशीर्वाद पाया। स्वामी जी ने भी कल रात्रि लखनऊ प्रवास करते समय सब कार्यकर्ताओं को बहुत आशीर्वाद दिया और इस चरण पादुका सेवा की बहुत सराहना की।

आज हम दशम अध्याय का तीसरा चरण देख रहे हैं, यह पूरा अध्याय कहानियों से भरा हुआ है। एक-एक विभूति की अपनी-अपनी कहानी है। कहानियों को पूरा सुनते हैं तो दसवें अध्याय में ही एक वर्ष पूरा लग जाएगा। इसमें एक हर पात्र की अलग-अलग कहानी है।

इस अध्याय को पूरा करने का हम पूरा प्रयास करेंगे। पिछली बार हमने इक्कीसवें श्लोक तक देखा-

आदित्यानामहं विष्णुर्ज्योतिषां रविरंशुमान् ।
मरीचिर्मरुतामस्मि नक्षत्राणामहं शशी ॥

भगवान ने कहा कि बारह आदित्यों में **विष्णु** हैं। बारह आदित्य, ग्यारह रुद्र, आठ वसु, दो अश्विनी कुमार। यह सब मिलकर तैंतीस कोटि (प्रकार) देवता माने जाते हैं। कई बार कुछ लोग शिव और विष्णु में भेद की बात करते हैं। गीता में भगवान के श्रीमुख से आया है कि विष्णु भी मैं ही हूँ, शिव भी मैं ही हूँ।

इक्कीसवें श्लोक में **विष्णु मैं हूँ,** ऐसा बताया है और तेईसवें श्लोक में **'रुद्र मैं हूँ'** यह बताया है। इसलिए शिव और विष्णु अलग नहीं हैं, एक ही हैं। यह श्रीमद्भगवद्गीता में प्रमाण के रूप में मिलता है।

10.22

वेदानां(म्) सामवेदोऽस्मि, देवानामस्मि वासवः।
इन्द्रियाणां(म्) मनश्चास्मि, भूतानामस्मि चेतना॥10.22॥

(मैं) वेदों में सामवेद हूँ, देवताओं में इन्द्र हूँ, इन्द्रियों में मन हूँ और प्राणियों की चेतना हूँ।

विवेचन - भगवान कहते हैं वेदों में सामवेद मैं हूँ। देवों में इन्द्र मैं हूँ। इन्द्रियों में मन मैं हूँ और भूत प्राणियों में चेतना शक्ति अर्थात जीवनी शक्ति मैं हूँ। जो ऋचाएँ गाई जाती हैं उन्हें सामवेद कहते हैं। जो नियत अक्षरों के मन्त्रों वाली ऋचाएँ है उन्हें ऋग्वेद कहते हैं। जो अनियत अक्षरों वाली है उन्हें यजुर्वेद कहा गया है। जिसमें भवन, अस्त्र और शस्त्र कैसे बनाना है, भोजन कैसे बनाना है, इन सभी सांसारिक विधाओं को अथर्ववेद कहा गया है। भगवान कहते हैं कि जो ऋचाएँ गाई जा सकती हैं वह सामवेद भी मैं हूँ और उनके जो राजा इन्द्र हैं, वह मेरी विभूति हैं।

सभी इन्द्रियों में पाँच कर्मेंद्रियाँ और पाँच ज्ञानेंद्रियाँ, इनका जो स्वामी है, वह मन भी मैं हूँ, क्योंकि इन्द्रियों की अपनी कोई विशेष शक्ति नहीं है।इन्द्रियों का सारा बल मन के जुड़ने से होता है। प्रज्ञा चक्षु स्वामी शरणानन्द जी महाराज जी ने बहुत महत्त्वपूर्ण सूत्र दिया। उन्होंने कहा कि **जिसको दृष्टि देते हैं उनको मन देना पड़ता है, इसलिए दृष्टि सम्भाल कर दिया करो।** बिना मन के किसी भी इन्द्रिय की क्रिया अधिक उपयोगी नहीं होती। उसका कोई ज्यादा मूल्य नहीं रहता है इसलिए भगवान ने कहा, कि इन पाँच कर्मेन्द्रियों का जो स्वामी मन है, वह मन मैं हूँ। सभी भूत प्राणियों की चेतना अर्थात जीवनी-शक्ति मैं हूँ। इस शरीर को हम कितना सम्भालते हैं, परन्तु जिस क्षण इस शरीर से प्राण निकल गए। शरीर वैसा का वैसा ही है, कुछ भी घटता-बढ़ता नहीं है। नाक-कान भी वैसे ही हैं क्योंकि वह मर गया। अब इसे कुछ भी अच्छा पहनाओ या खिलाओ, उसे कुछ फर्क नहीं पड़ता है और बोलते हैं कि उसको जल्दी से जला दो। जब उसके प्राण निकल गए, जीवन से जीवनी शक्ति निकल गई। भगवान कहते हैं, मैं वही जीवनी शक्ति हूँ, मैं वही चेतना हूँ।

10.23

रुद्राणां(म्) शङ्करश्चास्मि,वित्तेशो यक्षरक्षसाम्।
वसूनां(म्) पावकश्चास्मि, मेरुः(श्) शिखरिणामहम्॥10.23॥

रुद्रों में शंकर और यक्ष-राक्षसों में कुबेर मैं हूँ। वसुओं में पवित्र करने वाली अग्नि और शिखरवाले पर्वतों में सुमेरु मैं हूँ।

विवेचन - श्रीभगवान कहते हैं - हे अर्जुन! ग्यारह रुद्रो में **शङ्कर** मैं हूँ। यक्ष-राक्षसों में धन का स्वामी **कुबेर** मैं हूँ। आठ वसुओं में **अग्नि** मैं हूँ।

महाभारत के आरम्भ में गङ्गा जी के साथ शान्तनु का जब विवाह हुआ तो उन्होंने यह विवाह इसलिए किया कि वसुओं को श्राप मिला था, उस श्राप से उनकी मुक्ति करवानी थी। उन्होंने शान्तनु से इसी शर्त पर विवाह किया कि आप मुझसे कोई प्रश्न नहीं करेंगे। यदि आप मुझसे प्रश्न करोगे तो मैं चली जाऊँगी। शान्तनु ने कहा कि जो तुम कहोगी, मैं मानता हूँ, तो गङ्गा जी ने उनसे शादी कर ली। जब उनका पहला पुत्र हुआ तो उन्हें ले जाकर गङ्गा जी में प्रवाहित कर दिया। दूसरा भी गङ्गा जी में डाल दिया। इसी तरह उन्होंने सात पुत्रों को गङ्गा जी में प्रवाहित कर दिया तो शान्तनु को बहुत दर्द हुआ कि जैसे ही पुत्र प्राप्त होता है वैसे ही वह गङ्गा जी में उसे प्रवाहित कर देती हैं। कोई स्त्री इतनी कठोर हृदय वाली कैसे हो सकती है, परन्तु उन्हें लगा कि अगर मैंने पूछा तो यह चली जायेगी। उन्होंने एक-एक करके सात पुत्र गङ्गा जी के प्रवाह में डाल दिए और सातों वसुओं को मुक्त कर के वापस ब्रह्म लोक में भेज दिया।

शान्तनु को तो बात का पता नहीं था और गङ्गा जी बताती भी नहीं थीं, परन्तु जब आठवाँ वसु हुआ तो जब वह उसे भी प्रवाहित करने वाली थी तो शान्तनु ने उनका हाथ पकड़ लिया और कहा देवी रुको? अब मुझसे नहीं सहा जा रहा है। तुमने सात पुत्रों को प्रवाहित कर दिया। ऐसा कौन सी माँ कर सकती है? तुम्हारा हृदय कैसा है? अब तुम आठवें पुत्र को भी बहाने जा रही हो? मैं तुम्हें ऐसा नहीं करने दूँगा? गङ्गा जी ने शान्तनु से कहा कि आप मेरी शर्त भूल रहे हो? शान्तनु ने कहा? नहीं! मुझे याद है, जैसे ही मैं प्रश्न करूँगा, तुम चली जाओगी, लेकिन मुझे पहले यह बात बताओ कि तुम ऐसा क्यों कर रही हो? मैं तुम्हें इस पुत्र को नहीं बहाने दूँगा और तुमने जो सात पुत्रों को पहले प्रवाहित किया है उसका कारण भी बताओ।

गङ्गा जी ने कहा- वशिष्ठ मुनि के द्वारा आठ वसुओं को श्राप दिया गया था कि उनको मनुष्य लोक में मनुष्य रूप में जन्म लेना पड़ेगा। वह आठ वसु देव लोक का सञ्चालन करते हैं तो उन्होंने आकर मुझसे प्रार्थना की, कि यदि हम मनुष्य लोक में दीर्घकाल तक रहेंगे तो इस लोक का काम कौन करेगा? सारे संसार का काम बिगड़ जाएगा। आप कुछ उपाय कीजिए, तो मैंने उन्हें वचन दिया था कि मैं स्त्री के रूप में जाकर किसी मनुष्य से विवाह करूँगी और उन्हें जन्म देकर शीघ्र ही उनकी मुक्ति कर दूँगी ताकि मनुष्य लोक में उन्हें अधिक समय तक नहीं रहना पड़े, इसलिए मैनें सातों पुत्रों को प्रवाहित कर उनकी मुक्ति कर दी। इन सात वसुओं का नाम है - **आप, ध्रुव, सोम, घर, अनिल, अनल, प्रत्युष और प्रभास**। अब सात की मुक्ति तो हो गई है। यह जो अन्तिम वसु है प्रभास, इन्हें शान्तनु ने रोक दिया। यही प्रभास देवव्रत नाम से बड़े हुए और बाद में भीष्म पितामह कहलाए। यह भीष्म पितामह भी साधारण मनुष्य नहीं हैं। यह आठवें वसु हैं इसलिए वह इतने ज्ञानी और पराक्रमी हैं। प्रभास वसु को फिर शान्तनु ने अपने पास रखा और गङ्गा जी उन्हें छोड़कर चली गई, इसलिए भगवान कहते हैं कि आठों वसुओं में जो अग्नि है वह भी मैं ही हूँ। शिखरों में, सारे पर्वतों में जो सुमेरु पर्वत है उसे भी तुम मेरी ही विभूति जानो।

10.24

पुरोधसां(ञ्) च मुख्यं(म्) मां(म्), विद्धि पार्थ बृहस्पतिम्।
सेनानीनामहं(म्) स्कन्दः(स्),सरसामस्मि सागरः॥10.24॥

हे पार्थ ! पुरोहितों में मुख्य बृहस्पति को मेरा स्वरूप समझो। सेनापतियों में कार्तिकेय और जलाशयों में समुद्र मैं हूँ।

विवेचन - भगवान कहते हैं- हे अर्जुन! पुरोहितों में **बृहस्पति** मुझको मान। बृहस्पति देवताओं के गुरु हैं, सामुद्रिक ज्योतिष के व्याख्याता हैं। भीष्म पितामह देवव्रत जब बालक थे तो उनकी दीक्षा भी इन्ही गुरु बृहस्पति जी से ही हुई। सभी देवताओं को कभी कुछ पूछना होता है तो बृहस्पति जी से ही पूछते थे। ज्योतिष शास्त्र में ऐसा कहते हैं कि तर्जनी अँगुली का अन्तिम हिस्सा उठा हुआ हो तो उसका बृहस्पति तेज होता है। जिसका बृहस्पति तेज हो, सभी को उनकी बात माननी पड़ती है क्योंकि बृहस्पति उनके गुरु हैं। गुरुओं में मुख्य बृहस्पति मुझे ही जान और सेनापतियों में स्कन्द भी मुझे जान।

स्कन्द कौन हैं? अट्ठारह पुराणों में सबसे विशाल पुराण स्कन्द पुराण है। इसकी भी एक कथा है। तारकासुर नामक एक राक्षस था। वह राक्षस बहुत उपद्रवी और शक्तिशाली था और ब्रह्मा जी के वरदान से इतना पुष्ट हो गया कि मनुष्य तो क्या कोई भी देवता उसको मार नहीं सकता था। सभी उपाय करते हुए एक ही उपाय बचा कि यदि शिवजी के तेज से, साक्षात भगवान शङ्कर के वीर्य से कोई बालक उत्पन्न हो, वही इस तारकासुर को समाप्त कर सकता है और कोई भी उसे नहीं मार सकता। भगवान शङ्कर तो समाधि में लीन थे। सभी देवता उनकी स्तुति करने लगे कि आप एक पुत्र को जन्म दीजिए और हम उस पुत्र के द्वारा तारकासुर का वध करेंगे, नहीं तो यह पूरे ब्रह्माण्ड को नष्ट कर देगा।

भगवान शिव उस समय समाधि में रमे हुए थे, इसलिए उनकी इस बात में कोई रुचि नहीं थी परन्तु देवताओं का अत्यन्त आग्रह था इसलिए उन्होंने अपने तेज का स्खलन कर दिया। भगवान शिव के उस वीर्य को कोई सम्भाल नहीं सका, आखिर में गङ्गा जी के पास जब आया तो गङ्गा जी भी विह्वल हो गई और उन्होंने उसे उठाकर झाड़ियों में फेंक दिया। झाड़ियों में जाकर जब वह वीर्य गिरा तो उन झाड़ियों में उस वीर्य के तेज से अत्यन्त तेजस्वी बालक का प्रादुर्भाव हो गया। वह बालक इतना तेजस्वी था कि उस घने जङ्गल की झाड़ियों में उस बालक के तेज से पूरे जङ्गल में प्रकाश हो गया था। अचानक इतना प्रकाश उत्पन्न हुआ। यह देखकर वहाँ पर सप्त-ऋषि की सात पत्नियाँ जो संयोग से उस समय उस स्थान से गुजर रही थीं, वे उस स्थान को देखने जाने लगी। एक पत्नी तो आगे चली गई परन्तु छह सप्त-ऋषि पत्नियाँ जिन्हें कृतिकाएँ कहते थे, वह वहाँ पर रुक गई और उन्होंने उस बालक को देखा, जो अत्यन्त तेजस्वी, सुकुमार और मनोहारी लग रहा था। बालक को देखकर छहों माताओं के मन में अत्यन्त वात्सल्य जागृत हुआ कि यह एकदम नवजात शिशु यहाँ पर पड़ा है इसे तो दूध की आवश्यकता होगी। हम इसको स्तनपान कराएँगे। हम इसको दूध पिलाएँगे। जैसे ही उन कृतिकाओं ने यह विचार किया तो स्कन्द इतना तेजस्वी था, इसने छः मुख का आकार लेकर और छः मुख से, छः माताओ का स्तनपान करना आरम्भ किया और थोड़ा सा दूध पीकर ही वह एकदम से बड़ा होने लगा। अब यह सातों ऋषियों की पत्नियाँ थी तो उन्होंने समझ लिया कि यह शिवजी का पुत्र है।

इस बालक ने कृतिकाओं का दूध पिया था इसलिए इस बालक का नाम कार्तिकेय पड़ा। बालक को लेकर कृतिकाएँ शिवजी के

पास पहुँची। वहाँ पर पार्वती जी ने देखा तो कृतिकाओं ने शिव जी को कहा कि हम आपके पुत्र को लेकर आए हैं तो पार्वती जी ने पूछा कि मैं तो यहाँ बैठी हूँ, यह किसका पुत्र है? परन्तु पार्वती जी ने अपने तपोवल से जान लिया कि यह शिवजी का ही पुत्र हैं और उनके तेज से ही इस बालक का जन्म हुआ इसलिए यह मेरा ही बालक है।

अत्यन्त स्नेह से, उन छहों बालको का जब पार्वती जी ने आलिङ्गन किया तो छहों बालको का धड़ एक हो गया और छः सिर हो गए, इसलिए कार्तिकेय जी षडानन हो गए, छः सिर वाले। शिव जी के परिवार विशेष है। कार्तिकेय षडानन, शिवजी पञ्चानन और गणेश जी गजानन। सभी अद्भुत हैं। यह स्कन्द इतने तेजस्वी थे कि जैसे ही यह पैदा हुए तो देवता उनकी स्तुति करने आए। इन्द्र भी उनके पराक्रम को देखकर लज्जित हो गए। यहाँ एक युद्ध का भी वर्णन है और इन्द्र उनके द्वारा पराजित भी हो गए। इन्द्र ने कहा कि अब आप इन्द्र बन जाइए, आपने तो मुझे पराजित कर दिया और इस समय आप ही तारकासुर का वध भी कर सकते हैं। उन्होंने कहा- नहीं! आप ही यह पद सम्भालिए। इन्द्र ने कहा कि आप हमारी सेना के सेनापति होना स्वीकार कीजिए। देवसेना के सेनापति के रूप में आप आरूढ़ होकर उस तारकासुर का वध करिए।

स्कन्द ने यह बात स्वीकार कर ली और वह देवताओं के सेनापति बन गए। भगवान ने कहा सेनापतियों में स्कन्द भी मैं ही हूँ।

इसी प्रकार जब गणेश जी और कार्तिकेय जी की बात हुई कि कौन बड़ा है? तो उन्होंने बताया कि जो सबसे पहले ब्रह्माण्ड का चक्कर लगाकर आएगा वही बड़ा होगा। कार्तिकेय जी तो मोर पर बैठकर उड़ गए और गणेश जी का वाहन तो मूषक था, वह चल भी नहीं पा रहे थे। उन्होंने जल्दी से माता-पिता की परिक्रमा कर ली और माता-पिता के चरण छूकर यह कहा कि माता-पिता के चरणों में ही ब्रह्माण्ड है। वे सब देवताओं के द्वारा प्रथम पूजनीय देवता के रूप में स्थापित हो गए। कार्तिकेय जी को बहुत बुरा लगा तो वह उसी समय कैलाश से उड़कर दक्षिण की ओर चले गए, इसलिए दक्षिण भारत में विशेष रूप से कार्तिकेय भगवान की उपासना होती है। उत्तर भारत में कार्तिकेय भगवान का एक भी मन्दिर नहीं है। दक्षिण भारत में सभी मन्दिर कार्तिकेय जी के हैं और वह मोर की सवारी करते थे इसलिए मुरूगन के नाम से कार्तिकेय जी की प्रतिष्ठा दक्षिण भारत में हो गई और स्कन्द देवताओं के सेनापति के रूप में विख्यात हो गए। स्कन्द नाम उनका इसलिए हुआ क्योंकि स्खलित वीर्य से उनका जन्म हुआ था, इसलिए वह स्कन्द कहलाए। भगवान कहते हैं कि जलाशयों में समुद्र मैं हूँ।

10.25

महर्षीणां(म्) भृगुरहं(ङ्),गिरामस्म्येकमक्षरम्।
यज्ञानां(ञ्) जपयज्ञोऽस्मि, स्थावराणां(म्) हिमालयः॥10.25॥

महर्षियों में भृगु और वाणियों (शब्दों) में एक अक्षर अर्थात् प्रणव मैं हूँ। सम्पूर्ण यज्ञों में जप यज्ञ (और) स्थिर रहने वालों में हिमालय मैं हूँ।

विवेचन - भगवान कहते हैं - हे अर्जुन! महर्षियों में **भृगु** मैं हूँ।

भृगु जी शुक्राचार्य और लक्ष्मी जी के पिता हैं। एक बार सब ऋषियों में विवाद हुआ कि सबसे उत्तम देवता कौन है? शिवजी, ब्रह्माजी या विष्णुजी। सभी ऋषि आपस में बात कर रहे थे, इसमें से कोई शिवजी का समर्थक निकला, कोई विष्णु का समर्थक हो गया तो कोई ब्रह्मा जी का समर्थक हो गया। सभी ने मिलकर भृगु जी को नियुक्त किया कि आप परीक्षा लेकर बताइए कि तीनों में सबसे उत्तम कौन हैं? तीनों देवताओं में सर्वश्रेष्ठ किसको माना जाए? भृगु जी चिन्तित हो गए क्योंकि उनकी परीक्षा लेना कोई मामूली बात नहीं थी। ऋषियों ने कहा कि आप ही सबसे बड़े हो तो आप ही यह काम कर सकते हो। भृगु जी मान गए। वह सबसे पहले ब्रह्म लोक में पहुँचे, वहाँ जाकर वह ब्रह्माजी से भी ऊँचे आसन पर बैठ गए। उन्होंने ब्रह्माजी को प्रणाम नहीं किया और बैठकर ब्रह्माजी को तिरस्कार की दृष्टि से देखा और अपना काम करने लगे। ब्रह्माजी को बहुत बुरा लगा तो ब्रह्माजी ने कहा कि - भृगु तुम मेरे पुत्र हो, तुम्हें इतना भी विवेक और मर्यादा नहीं है, तुमने मुझे प्रणाम भी नहीं किया और ऊपर आसन पर भी बैठ गए। मेरा तिरस्कार भी करते हो। भृगुजी ने प्रणाम करते हुए कहा कि क्षमा चाहता हूँ, मैं किसी और काम से आया था, बाद में आपसे बात करता हूँ। अभी मुझे क्षमा कीजिए और वहाँ से चले गए। मन में सोचा कि ब्रह्माजी का तो पता चल गया कि वह अपने क्रोध को नहीं रोक पाते हैं।

वे शिवजी के पास पहुँचे और वहाँ भी वैसे ही किया तो शिवाजी ने कुछ नहीं कहा, परन्तु भृगु जी को तो परीक्षा लेनी थी। भृगु जी शिवजी से बोले, अरे शिव! मैं तुमसे आज कोई बात करने आया हूँ, तो शिव जी ने सोचा कि आज इन्हें क्या हो गया है? भृगु जी बोले आपको कुछ समझ नहीं है, कोई विवेक नहीं है, ऐसे ही शिव बनकर बैठे हो। इसका क्या मतलब है कि किसी को भी वरदान दे दोगे, जो भी राक्षस आता है उसे भी आप वरदान दे देते हो और फिर हमें सम्भालना पड़ता है। आप अपनी बुद्धि लगाकर काम किया करिए। इसी प्रकार से भृगु जी ने शिवजी को कटु वचन कहना शुरू कर दिया। दो-तीन मिनट तक तो शिवजी सुनते रहे, परन्तु जैसे ही उनका तीसरा नेत्र फड़कने लगा तो शिवजी ने तिरछी निगाह से देखा। भृगु समझ गए कि अब तो गड़बड़ होने वाली है तो उन्होंने तुरन्त ही हाथ जोड़े कि मुझसे गलती हो गई है जो मैंने आपको इतना कुछ कहा। मुझे क्षमा कीजिए, मैं बाद में आता हूँ। वह वहाँ से चले गए।

अब वे विष्णु जी के पास पहुँचे। भगवान नारायण क्षीरसागर में शयन कर रहे थे, लक्ष्मी जी चरण दबा रही थीं। उन्होंने जैसे ही भृगु को अपने पास आते हुए देखा और कहा कि पिताजी आए हैं, तो वह मुस्कुराई और प्रणाम किया। भृगु जी विष्णु भगवान के पास आकर खड़े हो गए और लक्ष्मी जी को कहा इन्हें जगाओ तो लक्ष्मी जी ने कहा नारायण तो सो रहे हैं, इन्हें कौन जगा सकता है। जब यह जग जाएँगे तो बात कर लीजिए। भृगु जी ने देखा कि मुझे तो उनकी परीक्षा लेनी है। अचानक ही उन्होंने आवेश में आकर विष्णु भगवान की छाती पर लात मार दी और कहा कि तुम पड़े हुए सो रहे हो तुम्हारे घर अतिथि आए हुए हैं, सोते ही रहोगे क्या?

छाती पर लात पड़ते ही विष्णु भगवान जी जाग गए, परन्तु उन्होंने क्रोध नहीं किया, तुरन्त ही उनके पैर पकड़ लिए और कहने लगे, महर्षि आपको चोट तो नहीं लगी क्योंकि मेरी छाती कठोर है। इस प्रहार से आप को चोट लग गई होगी। विष्णु भगवान ने क्रोध करना तो दूर, परन्तु उनकी चिन्ता करना प्रारम्भ कर दिया और पूछा कि आपको लगी तो नहीं? भृगु जी प्रसन्न हो गए। उन्होंने कहा कि मैं जिस काम के लिए आया था, हे नारायण! वह काम मेरा पूरा हो गया। आपसे उत्तम कोई भी नहीं है क्योंकि अन्यों को तो मैंने थोड़ा सा ही बोला, तो वे नाराज हो गए और आपको तो मैने लात ही मार दी उसके बाद भी आपने कोई क्रोध नहीं किया और मेरी ही चिन्ता करने लगे।

भगवान नारायण ने कहा कि मैं चिन्ता नहीं करता, परन्तु मैं आपके चरणों को सदैव ऐसे ही धारण करूँगा, इसलिए जब भी भगवान नारायण का विग्रह देखेंगे तो उनके वक्ष पर चरण-चिह्न बने होते हैं। उसे भृगु-लता कहते हैं, परन्तु लक्ष्मी जी को यह सहन नहीं हुआ तो उन्होंने कहा कि पिताजी आपने भले ही परीक्षा लेने के लिए किया हो परन्तु आपने यह ठीक नहीं किया। यह आपके जामाता है और उन पर ऐसे चरणों के प्रहार करना एकदम अनैतिक है। जाइए! आज से मैं आपके कुल में वास नहीं करूँगी। भृगु बोले यह तो ठीक नहीं है, मैं तो धन के बिना काम चला लूँगा। परन्तु मेरे वंश में उत्पन्न हुए सारे भृगुवंशी ब्राह्मण निर्धन रहें तो बहुत गलत होगा और जब वह वापस लौटे तो भृगुवंशी ब्राह्मणों ने हाहाकार कर दिया कि आपने यह क्या कर दिया? बिना लक्ष्मी जी के हमारा काम कैसे चलेगा? हम सब के सब तो निर्धन हो जाएँगे। भृगु जी ने कहा कि यदि यह पाप मैंने किया है तो इसका उपाय भी मैं ही करूँगा। उन्होंने भृगु-संहिता लिखी और उसमें लिखा कि जो ब्राह्मण इसको अङ्गीकार कर लेगा उस ब्राह्मण को कभी भी लक्ष्मी की कमी नहीं रहेगी। यदि कोई झूठा भी हाथ देख लेगा तो उसे भी लोग दस रुपए तो दे ही देंगे और भृगु ने जो उस समय कहा और जो विधान सिद्ध कर दिया, वह आज भी होता है। ज्योतिष शास्त्र का सहारा लेकर कोई भी ब्राह्मण निर्धन नहीं रहेगा। ऐसे ब्राह्मणों की सन्तुष्टि हो गई।

भृगु के बाद भार्गव वंश हुआ। अब जितने भी ब्राह्मण अपने नाम के आगे भार्गव लगते हैं वह सब भृगु-वंशी हैं।

भगवान ने कहा, गीता में भगवान ने चौथे अध्याय में बारह यज्ञों को बताया और यह भी कहा कि वेदों में सौ से भी ज्यादा यज्ञ हैं, परन्तु यहाँ दसवें अध्याय में भगवान ने कहा- सभी यज्ञ में जप यज्ञ मैं हूँ। नाम जप को भगवान ने अपनी विभूति भी कहा।

भाव को भाव आनख आलस हूं।
नाम जपत मंगल दिसी दसहु ।।

तुम कैसे भी भाव से, अभाव से, आलस से, नाम जप कैसे भी करो, सन्तुष्ट हो जाओगे।

कलयुग केवल नाम अधारा।
सुमिरि सुमिरि नर उतरीही पारा।।

गोस्वामी जी ने नाम जप की बहुत महिमा गाई है। कलयुग में एकमात्र साधन, सुलभ साधन यही नाम जप है। भगवान ने कहा, यह **जप** भी मैं ही हूँ।

भगवान के नाम का जाप करना। **श्री राम, जय राम, जय-जय राम राम**, कोई **हरे राम** का जप करता है, कोई षोडश मन्त्र का जप करता है, कोई **श्रीकृष्णं शरणम् मम्**, कोई **नमः शिवाय** का जाप करता है।
किसी भी नाम या मन्त्र का जाप करना। अच्छे साधक को परम श्रद्धेय भाई जी नाम जप का आग्रह करते है। रोज एक लाख नाम जप करो। साधकों को रोज एक लाख नाम जप करने में आठ घण्टे लगते हैं। यदि जीवन में कुछ भी नहीं किया और रोज नाम जप करते रहें तो भी हमारा जन्म सफल है। अक्षरों में **ॐ** कार मैं हूँ और स्थिर रहने में **हिमालय** मैं हूँ।

10.26

अश्वत्थः(स्) सर्ववृक्षाणां(न्),देवर्षीणां(ञ्) च नारदः।
गन्धर्वाणां(ञ्) चित्ररथः(स्), सिद्धानां(ङ्) कपिलो मुनिः॥10.26॥

सम्पूर्ण वृक्षों में पीपल, देवर्षियों में नारद, गन्धर्वों में चित्ररथ और सिद्धों में कपिल मुनि (मैं हूँ)।

विवेचन - श्रीभगवान कहते हैं- सब वृक्षों में पीपल का वृक्ष मैं हूँ। यही एक वृक्ष है जो दिन में चौबीस घण्टे ऑक्सीजन देता है और रात को भी कार्बन डाइऑक्साइड नहीं छोड़ता है। पन्द्रहवें अध्याय में भगवान ने ब्रह्माण्ड की उपमा पीपल के वृक्ष से की थी।

देव ऋषियों में नारद मुनि मैं हूँ। नारद जी के बारे में समझना चाहिए। नारद जी एक व्यक्ति नहीं है। नारदीय परम्परा है, इसीलिए बहुत तरह के नारद होते हैं। देव ऋषियों की भी अलग परम्परा है। नारद की भी अलग परम्परा है। परन्तु **देव ऋषि नारद** एक ही है।

गन्धर्वलोक में चित्ररथ मैं हूँ। यह गन्धर्वों के राजा हैं। इन्हीं की बहन चित्राङ्गदा से अर्जुन का विवाह हुआ है और इसी चित्ररथ ने कर्ण और दुर्योधन को बन्दी बनाया था। अर्जुन ने समस्त गन्धर्वों को और चित्ररथ को पराजित करके दुर्योधन और कर्ण को मुक्त कराया था।

सिद्धों में **कपिल मुनि** मैं हूँ। देवहुति और कर्दम ऋषि की सन्तान के रूप में कपिल मुनि ने अवतार लिया था। सन्तो और सिद्ध पुरुषों में कपिल मुनि मैं हूँ।

10.27

उच्चैःश्रवसमश्वानां(म्),विद्धि माममृतोद्भवम्।
ऐरावतं(ङ्) गजेन्द्राणां(न्), नराणां(ञ्) च नराधिपम्॥10.27॥

घोड़ों में अमृत के साथ समुद्र से प्रकट होने वाले उच्चैःश्रवा नामक घोड़े को, श्रेष्ठ हाथियों में ऐरावत नामक हाथी को और मनुष्यों में राजा को मेरी विभूति मानो।

विवेचन - भगवान कहते हैं- हे अर्जुन! अश्वनाम (घोड़ों) में अमृत के साथ उत्पन्न होने वाले **उच्चैःश्रवा** नाम का घोड़ा, श्रेष्ठ हाथियों में **ऐरावत** नामक हाथी और मनुष्यों में **राजा** मैं हूँ।

10.28

आयुधानामहं(म्) वज्रं(न्), धेनूनामस्मि कामधुक्।
प्रजनश्चास्मि कन्दर्पः(स्), सर्पाणामस्मि वासुकिः॥10.28॥

आयुधों में वज्र (और) धेनुओं में कामधेनु मैं हूँ। सन्तान-उत्पत्ति का हेतु कामदेव मैं हूँ और सर्पों में वासुकि मैं हूँ।

विवेचन - श्रीभगवान कहते हैं कि शस्त्रों में **वज्र** मैं हूँ।

अस्त्र वह है जो फेंक कर मारे जाते हैं जैसे भाला। जो हाथ में लेकर लड़ा जाता है उसे **शस्त्र** कहते हैं, जैसे तलवार, गदा, वज्र आदि। वज्र दधीचि ऋषि की हड्डियों से बना हुआ है। वह वज्र भी मैं हूँ। गायों में **कामधेनु** मैं हूँ। शास्त्रोक्त रीति से जो धारण किया जाए वह **कामदेव** भी मैं हूँ। उन्होंने कामदेव का विरोध नहीं किया। भगवान कहते हैं सर्पों में सर्पराज **वासुकी** भी मैं हूँ।

10.29

अनन्तश्चास्मि नागानां(म्), वरुणो यादसामहम्।
पितॄणामर्यमा चास्मि, यमः(स्) संयमतामहम्॥10.29॥

नागों में अनन्त (शेषनाग) और जल-जन्तुओं का अधिपति वरुण मैं हूँ। पितरों में अर्यमा और शासन करने वालों में यमराज मैं हूँ।

विवेचन - श्रीभगवान कहते हैं- हे अर्जुन! नागों में **शेषनाग** मैं हूँ। शेषनाग के अवतारी लक्ष्मण जी हैं, बलराम जी हैं। जलचरों का अधिपति देवता **वरुण** भी मैं हूँ। पितरों में **अर्यमा** नामक पितृ मैं हूँ। पितृ चार प्रकार के होते हैं। **गव्यवाह, अनल, सोम और अर्यमा।**

इसमें जो अर्यमा पितृ हैं, वे श्राद्ध आदि तर्पण के समय अपने पितरों के निमित्त, हम जो भाग अर्पण करते हैं उसको ग्रहण करके हमारे पितरों तक पहुँचाते हैं।चन्द्रमा के पूर्व भाग में पितृलोक की स्थिति है, उस पितृ लोक के मुख्य देवता अर्यमा ही हैं।

भगवान कहते हैं पितरों में अयर्मा मैं हूँ और शासन करने वालों में **यमराज** मैं हूँ। धर्मराज और यमराज एक ही हैं, यह अलग नहीं हैं।

10.30

प्रह्लादश्चास्मि दैत्यानां(ङ्), कालः(ख्) कलयतामहम्।
मृगाणां(ञ्) च मृगेन्द्रोऽहं(म्), वैनतेयश्च पक्षिणाम्॥10.30॥

दैत्यों में प्रह्लाद और गणना करने वालों (ज्योतिषियों) में काल मैं हूँ तथा पशुओं में सिंह और पक्षियों में गरुड मैं हूँ।

विवेचन - श्रीभगवान कहते हैं- दैत्यों में **प्रहलाद** मैं हूँ। सभी दैत्यों में सबसे सात्त्विक वही हैं। गणना करने वालों में **समय** मैं हूँ। पशुओं में भृगराज **सिंह** मैं हूँ। पक्षियों में पक्षियों का राजा **गरुड़** मैं हूँ।

10.31

पवनः(फ्) पवतामस्मि, रामः(श्) शस्त्रभृतामहम्।
झषाणां(म्) मकरश्चास्मि, स्रोतसामस्मि जाह्नवी॥10.31॥

पवित्र करने वालों में वायु (और) शास्त्रधारियों में राम मैं हूँ। जल-जन्तुओं में मगर मैं हूँ। बहने वाले स्त्रोतों में गंगाजी मैं हूँ।

विवेचन - भगवान कहते हैं पवित्र करने वालों में **वायु** मैं हूँ।

जल, मिट्टी से शुद्धि होती है। जिस प्रकार यह गिलास अभी जूठा है तो हमें लगता है कि हम इसे साबुन या राख से माँज देते हैं और धोकर यह पवित्र हो जाता है, परन्तु नहीं। धोने से यह शुद्ध होता है, जब तक यह सूख नहीं जाता है तब तक यह दोबारा उपयोग करने के लिए पवित्र नहीं है। हम यह भूल करते हैं कि तुरन्त धोकर बर्तन को दोबारा उपयोग में ले लेते हैं। वह शुद्ध तो है परन्तु वह पवित्र नहीं है क्योंकि वायु उसको पवित्र करती है। जब तक वायु का स्पर्श नहीं होता और जब तक वह सूख नहीं जाता, तब तक वह पवित्र नहीं माना जाता और इसलिए विशिष्ट बात यह है जितनी भी धातुएँ हैं उनको जल से, मिट्टी से शुद्ध करके वायु से पवित्र करना पड़ता है।

कोई भी चाँदी का बर्तन हो तो उसमें साबुन और मिट्टी लगाने की आवश्यकता नहीं होती है, उसकी शुद्धि जल से ही मानी जाती है और वायु से पवित्र हो जाती है।

यदि कोई सोने का पात्र है तो उसे जल से भी नहीं धोया जाता, केवल वायु से ही उसकी शुद्धि हो जाती है और वह पवित्र माना जाता है। अन्य धातुओं को राख से माँजकर फिर जल से धोकर और वायु से सुखाकर शुद्ध करना पड़ता है। स्वर्ण को केवल वायु से पवित्र करना होता है।
यही पवित्र करने वाली वायु मैं हूँ।

गीता मैत्री में रामजी का सुन्दर चित्र बाल रूप में आया है उसमें यही लिखा है कि शस्त्रधारियों में राम मैं हूँ। इस समय पूरा जगत राममय है। '**शास्त्रधारी में राम**' इसलिए कहते हैं कि कोई दवा भी होती है तो कहते हैं यह रामबाण है, इसे खा लो क्योंकि रामबाण कभी खाली नहीं जा सकता। वह अचूक है। राम जी के शस्त्र ही ऐसे हैं। शस्त्रधारियों में राम मैं हूँ।

मछलियों में **मगर** मैं हूँ। नदियों में **भागीरथी गङ्गा** मैं ही हूँ।
गङ्गोत्री से बांग्लादेश तक पच्चीस सौ किलोमीटर गङ्गा जी की लम्बाई है। जिसमें गङ्गोत्री से ऋषिकेश तक चौदह स्थान हैं, इन्हें चौदह प्रयाग कहा जाता है। **देवप्रयाग, रूद्रप्रयाग, कर्णप्रयाग, सोनप्रयाग**। इन प्रयागों में गङ्गा जी का स्नान सर्वोत्तम कहा जाता है और उसके बाद तीन स्थान मैदानी क्षेत्र में विशेष माने जाते हैं। **पहला हरिद्वार, दूसरा प्रयागराज और तीसरा जहां गङ्गा जी की पूर्ण आहुति (समुद्र) गङ्गासागर में होती है। यह तीन स्थान विशेष माने गए हैं।** चौदह प्रयाग और गङ्गासागर ऐसे ही सत्रह स्थानो पर जो गङ्गा जी का स्नान है, वह विशेष रूप से पुण्यदायी माना गया है। वैसे तो गङ्गा जी का स्नान हमेशा ही पुण्यदायी होता है। इसलिए भगवान कहते हैं कि नदियों में **गङ्गा** मैं हूँ।

10.32

सर्गाणामादिरन्तश्च,मध्यं(ञ्) चैवाहमर्जुन।
अध्यात्मविद्या विद्यानां(म्), वादः(फ्) प्रवदतामहम्॥10.32॥

हे अर्जुन ! सम्पूर्ण सृष्टियो के आदि, मध्य तथा अन्त में मैं ही हूँ। विद्याओं में अध्यात्मविद्या (ब्रह्म विद्या) और परस्पर शास्त्रार्थ करने वालों का(तत्त्व-निर्णय के लिये किया जाने वाला) वाद मैं हूँ।

विवेचन - श्री भगवान कहते हैं- हे अर्जुन! सृष्टियों का **आदि, अन्त और मध्य** भी मैं ही हूँ। विद्याओं में **ब्रह्म विद्या अध्यात्म विद्या** मैं हूँ। परस्पर विवाद करने वालों के लिये **तत्त्व**, निर्णय करने वालों के लिए **वाद** मैं हूँ।

हमारे शब्द है संवाद (कन्वर्सेशन) कहलाते हैं। 'सम + वाद' चार तरह के माने गए हैं।

पहला कहा गया **जल्प।** जल्प मतलब अपने मत का मण्डन, दूसरे के मत का खण्डन।

गोस्वामी जी भाषा के अद्भुत ज्ञाता हैं। उनकी कल्पना ही अलग है। जब रावण राम जी से युद्ध करने आया तो अपनी बढ़ाई करने लगा और राम जी से कहने लगा तुम तो कुछ नहीं कर सकते। मैं इतना बड़ा हूँ।

काल देख रहा है रावण को। भगवान मुस्कुरा कर बोले-

सुनि दुर्वचन काल बस जाना।
बिहसि बचन कहा कृपा निधाना।।
सत्य सत्य सब तब प्रभुताई।
जल्पसि जनि देखाउ मनुसाई।।

तुम अपनी प्रभुताई जितनी गा रहे हो, मुझे पता है उसमें सत्य कितना है। तुमअपना मण्डन कर रहे हो दूसरों का खण्डन कर रहे हो।

दूसरा होता है **वितण्डा**। वितण्डा अर्थात् दूसरे का खण्डन, अपना मण्डन नहीं।

आजकल सारा विपक्ष कहता है, मोदी गलत है, मोदीजी ने यह खराब किया, मोदी ऐसा करते हैं, मोदी विदेश यात्रा करते हैं, कितने का सूट पहनते हैं। तुमने सत्तर साल में क्या किया? वह तो बताओ। क्योंकि अपना मण्डन करने के लिए हमारे पास कुछ नहीं है, हम तो दूसरे का खण्डन करेंगे। कांग्रेस और केजरीवाल सब वितण्डा वाले हैं। दूसरे का खण्डन करते रहते हैं अपना मण्डन करने को कुछ नहीं।

तीसरा है **विवाद**। किसी भी सही गलत से कोई मतलब नहीं है, बस मैं सही हूँ। कितना भी झूठ बोलकर, कुतर्क करके इसे साबित करना है। किसी भी तरह से निष्कर्ष नहीं निकलने देना होता है।

परिवार में होता है, भाई-भाई में होता है, समाज में होता है। दस साल से विवाद चल आ रहा है, कितनी भी मीटिङ्ग हो गई, परन्तु वह सुलझती नहीं है। दोनों पक्ष एक दूसरे की बात मानने को तैयार नहीं हैं।

चौथा है **वाद** (संवाद)। जो भी बात हम करेंगे वह ठीक होगी तो दोनों पक्षों को मानना पड़ेगा। मैं सही हूँ इस पर कोई फोकस नहीं है, पर क्या सही है, इसी पर फोकस करना है और जिसका पक्ष सही होता है वह हम दोनों को मानना पड़ेगा। यह हो गया वाद और इसी को संवाद भी कहते हैं। आपस की बातचीत करने वालों में वाद मैं हूँ।

10.33

अक्षराणामकारोऽस्मि, द्वन्द्वः(स्) सामासिकस्य च।
अहमेवाक्षयः(ख्) कालो, धाताहं(म्) विश्वतोमुखः॥10.33॥

अक्षरों में अकार और समासों में द्वन्द्व समास मैं हूँ। अक्षय काल अर्थात् काल का भी महाकाल (तथा) सब ओर मुख वाला धाता (सबका पालन-पोषण करने वाला भी) मैं ही हूँ।

विवेचन -हे अर्जुन! अक्षरों में **'अ'** कार मैं हूँ। हमनें भी गीता परिवार में 'अ' कार सीखा है। राम नहीं राम। 'अ' कार लेकर बोलना पड़ता है क्योंकि बिना 'अ' कार के कोई भी शब्द अधूरा रहता है। इसका आरम्भ भी उसी से होता है और अन्त भी इसी से होता है वही 'अ' कार मैं हूँ।

समासों में **द्वन्द्व** समास मै हूँ।

समास क्या होता है? **जब दो शब्दों को आपस में जोड़ा जाता है तो उसे समास कहते हैं।** कई तरह के समास होते हैं। उनमें भी चार मुख्य समास हैं।
पहला है **अव्यय भाव समास-** इसमें पहला पद प्रधान होता है, दूसरा पद गौण होता है। बेशर्म यानि जिसको बिल्कुल भी शर्म नहीं है। 'बे' इसमें महत्त्वपूर्ण हो गया। यथाशक्ति 'यथा' महत्त्वपूर्ण है। जिसका पहला पद महत्त्वपूर्ण है और दूसरा कम

महत्त्वपूर्ण, यह अव्यय भाव समास है।

दूसरा है **तत्पुरूष समास-** जिसमें द्वितीय प्रधान होता है। अकाल-पीड़ित। इसमें अकाल महत्त्वपूर्ण नहीं है इसमें 'पीड़ित' महत्त्वपूर्ण है। आराम-कुर्सी। आराम महत्त्वपूर्ण नहीं है, कुर्सी महत्त्वपूर्ण है।

तीसरा **बहुव्रीहि समास**। इसमें दोनों पद प्रधान नहीं होते हैं। अर्थ भिन्न होता है, जेसे- दशानन। दशानन- दस सर वाला, यह रावण को बोला जाता है। इसमें दोनों पद का महत्त्व नहीं है और तीसरा पद प्रधान हो गया। **दशानन अर्थात रावण। दिगम्बर-** जैन मुनि, जो कपड़े नहीं पहनता है। **धनञ्जय-** जिसने धन का बहुत अर्जन कर रखा है अर्थात अर्जुन। इसमें भी दोनों पद महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। धन का अर्जन करने वाला **अर्जुन धनञ्जय** है। इसे बहुव्रीहि समास कहते हैं।

चौथा समास है **द्वन्द्व समास-** इसमें दोनों पद प्रधान होते हैं। **सुख-दुख, राजा-रङ्क, सर्दी-गर्मी, अन्न-जल।** जहाँ पर दोनों पदों का समान महत्त्व होता है। भगवान कहते हैं वह द्वन्द्व समास मैं हूँ। भगवान ने पूरी गीता में द्वन्द्व को बहुत महत्त्व दिया है। जो द्वन्द्व को जीत ले वही जीवन को जीत लेता है। अक्षय काल का भी महाकाल और दोनों ओर से मुख वाला भी मैं ही हूँ।

10.34

मृत्युः(स्) सर्वहरश्चाहम्, उद्भवश्च भविष्यताम्।
कीर्तिः(श्) श्रीर्वाक्च नारीणां(म्), स्मृतिर्मेधा धृतिः क्षमा॥10.34॥

सबका हरण करने वाली मृत्यु और भविष्य में उत्पन्न होने वाला मैं हूँ तथा स्त्री-जाति में कीर्ति, श्री, वाक् (वाणी), स्मृति, मेधा, धृति और क्षमा (मैं हूँ)।

विवेचन - श्रीभगवान कहते हैं- हे अर्जुन! मैं ही सबका नाश करने वाला मृत्यु हूँ।

अंग्रेजी में हम कहते हैं '**GOD**' **(**जनरेटर, ऑपरेटर, डिस्ट्रॉयर)। भगवान कहते हैं मैं इन सबको उत्पन्न करने वाला हूँ, मैं ही सबका पालन करने वाला हूँ और मैं ही सब कुछ समाप्त करने वाला हूँ।

भगवान ने यहाँ पर सात देवताओं की स्त्रियों के नाम बताएँ हैं। कभी भी किसी बालिका का नाम रखना हो तो भगवान ने सात देवताओं की उत्तम स्त्रियों के नाम बताए हैं। **कीर्ति, श्री, वाक्, स्मृति, मेधा, धृति और क्षमा।** स्मृति, मेधा, धृति और क्षमा। इनमें चार अन्तर के गुण हैं, कीर्ति, श्री और वाक् बहिर्गुण हैं। वाक् यानि वाणी, श्री यानी ऐश्वर्य।

10.35

बृहत्साम तथा साम्नां(ङ्),गायत्री छन्दसामहम्।
मासानां(म्) मार्गशीर्षोऽहम्, ऋतूनां(ङ्) कुसुमाकरः॥10.35॥

गायी जाने वाली श्रुतियों में बृहत्साम और सब छन्दों में गायत्री छन्द मैं हूँ। बारह महीनों में मार्गशीर्ष (और) छः ऋतुओं में वसन्त मैं हूँ।

विवेचन - गायन करने योग्य श्रुतियों में **व्रहत्साम** और छन्दों में गायत्री छन्द मैं हूँ। महीनो में **मार्गशीर्ष** मैं हूँ। ऋतुओं में ब**सन्त** भी मैं हूँ। गायत्री जी सरिता देवी की उपासना है और महर्षि विश्वामित्र ने इस मन्त्र को सिद्ध किया है। ऋषि वशिष्ट से वे नन्दी गाय नहीं ले पाए और ब्रह्म ऋषि बनूँगा यह सोचकर तप करने लगे और उस तप के बीच में गायत्री मन्त्र को सिद्ध कर दिया।

भगवान ने चैत्र को अपना विभूति नहीं बताया। **मार्गशीर्ष** को बताया। महाभारत काल में नववर्ष का आरम्भ चैत्र से नहीं होता है, मार्गशीर्ष से ही होता है। गीता का गायन भी मार्गशीर्ष में ही हुआ और इसलिए गीता का प्राकट्य भी मार्गशीर्ष में ही करते हैं। इसलिए मार्गशीर्ष को ही सर्वोत्तम माना गया है।

ऋतुओं में **बसन्त** ऋतु। बसन्त ऋतु को भी सर्वोत्तम माना गया है, क्योंकि इसमें न गर्मी होती है न सर्दी। यह बहुत सुहावनी ऋतु होती है। इसमें पुष्पों की भी सुगन्ध आती रहती है और सबसे आरामदायक ऋतु मानी जाती है। यह बसन्त ऋतु भी मैं हूँ।

10.36

द्यूतं(ञ्) छलयतामस्मि,तेजस्तेजस्विनामहम्।
जयोऽस्मि व्यवसायोऽस्मि, सत्त्वं(म्) सत्त्ववतामहम्॥10.36॥

छल करने वालों में जुआ (और) तेजस्वियों में तेज मैं हूँ। (जीतने वालों की) विजय, (निश्चय करने वालों का) निश्चय (और) सात्त्विक मनुष्यों का सात्त्विक भाव मैं हूँ।

विवेचन - छल करने वालों में **जुआ** मैं हूँ। प्रभावशाली पुरुषों का **प्रभाव** मैं हूँ। जीतने वालों की **विजय** मैं हूँ और निश्चय करने वालों का **निश्चय** मैं हूँ। सात्त्विक पुरुषों का **सात्त्विक भाव** मैं हूँ।

10.37

वृष्णीनां(म्) वासुदेवोऽस्मि, पाण्डवानां(न्) धनञ्जयः।
मुनीनामप्यहं(म्) व्यासः(ख्), कवीनामुशना कविः॥10.37॥

वृष्णि वंशियों में वसुदेव पुत्र श्रीकृष्ण (और) पाण्डवों में अर्जुन मैं हूँ। मुनियों में वेदव्यास (और) कवियों में कवि शुक्राचार्य भी मैं हूँ।

विवेचन - वर्षिनी वंशियों में **वासुदेव**, मैं तेरा सखा, स्वयं मैं वासुदेव हूँ। पाण्डवों में धनञ्जय यानि तू है। मुनियों में **वेद व्यास** मैं हूँ। कवियों में **शुक्राचार्य** मैं हूँ।

10.38

दण्डो दमयतामस्मि, नीतिरस्मि जिगीषताम्।
मौनं(ञ्) चैवास्मि गुह्यानां(ञ्), ज्ञानं(ञ्) ज्ञानवतामहम्॥10.38॥

दमन करनेवालोंमें दण्डनीति और विजय चाहनेवालोंमें नीति मैं हूँ। गोपनीय भावोंमें मौन और ज्ञानवानोंमें ज्ञान मैं हूँ।

विवेचन - भगवान कहते हैं- हे अर्जुन! दमन करने वालों में **दण्ड** मैं हूँ।
साम, दाम, दण्ड, भेद, ये चार नीतियाँ होती हैं। रामजी भी कहते हैं, सागर वन्दन के समय, जब समुद्र को कहा कि रास्ता दो। तीन दिन तक बैठकर उनसे प्रार्थना की। उपवास किया तो भी समुद्र नहीं आया तो भगवान को क्रोध आ गया।

विनय न मानत जलधि जड़, गए तीन दिन बीति।
बोले राम सकोप तव, भए बिन होय न प्रीति।।

भगवान कहते हैं सबको काबू में रखने के लिए साम, दाम, दण्ड, भेद होता है। इन चारों में दण्ड नीति मैं हूँ, क्योंकि उसके बिना दुष्ट लोग मानते नहीं हैं। शासन को बिना दण्ड के किसी उपयोग का नहीं माना जाता। किसी को जीतना है तो अनीति से नहीं जीतना चाहिए। नीति से होंगे तो मैं तुम्हारे साथ रहूँगा।

गुह्यानाम (गुप्त रखने का भाव) में **मौन** मैं हूँ। यह बहुत ही सुन्दर बात है। सब कुछ बोलना जरूरी नहीं होता। भगवान भी यहाँ पर इस बात को मानते हैं। कई बार सच बोलने के चक्कर में जो नहीं बोलना हो वह भी बोलते रहते हैं। सब कुछ बोलना अनिवार्य नहीं होता है। कुछ बातों को गुप्त भी रखना चाहिए।

हम कहते हैं, किसी को नहीं बताना, तुमको तो बता रहा हूँ, तुम किसी को मत बताना। यह हमारे लिए गुप्त बात है अगर किसी को न बताओ तो मैं तुम्हें एक बात बताता हूँ। यह बात तो बिल्कुल पक्की ही होती है कि यह बात आगे जाने वाली ही है। ज्ञानवानों में **तत्व ज्ञान** मैं हूँ।

10.39

यच्चापि सर्वभूतानां(म्), बीजं(न्) तदहमर्जुन।
न तदस्ति विना यत्स्यान्, मया भूतं(ञ्) चराचरम्॥10.39॥

और हे अर्जुन! सम्पूर्ण प्राणियों का जो बीज (मूलकारण) है, वह बीज भी मैं ही हूँ; (क्योंकि) वह चर-अचर (कोई) प्राणी नहीं है जो मेरे बिना हो अर्थात् चर-अचर सब कुछ मैं ही हूँ।

विवेचन - भगवान कहते हैं - हे अर्जुन! जो सब भूतों की उत्पत्ति का **कारण है वह** भी मैं ही हूँ क्योंकि चर और अचर कोई भी भूत ऐसा नहीं है जो मुझसे रहित हो, इसलिए किसी को यह भ्रम नहीं होना चाहिए।

भगवान ने जो विभूतियाँ बतलाई हैं तो इनमें तो भगवान हैं और जो नहीं बताया वहाँ भगवान नहीं है। भगवान कहते हैं कि यह बात तो मैं विशेष रूप से बतला रहा हूँ। अब इस हवा में अग्नि है या नहीं, हम कहेंगे हमें तो नहीं दिख रही। अभी माचिस जलाओ तो अग्नि आ जाएगी। अग्नि तो यहीं पर थी परन्तु प्रकट विभूति के कारण हुई। उसे किसी तरह से घर्षण किया या दो पत्थरों को रगड़ा तो अग्नि उत्पन्न हो गई। पत्थर में अग्नि नहीं है, अग्नि तो इसी वायु में है। ऑक्सीजन न हो तो पत्थर रगड़ने से भी अग्नि नहीं आएगी, परन्तु इस वायु में होने पर भी प्रकट कब हुई, जब दो पत्थरों का घर्षण किया।

विभूति रूप में कौन सी चीज कहाँ पर प्रकट होती है, वह दूसरी बात है। विद्यमान तो वह सदा ही है। अब यहाँ पानी है या नहीं? H2O, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन भी यहाँ पर है यदि प्यास लगे तो हाथ से हाइड्रोजन तो नहीं पी जा सकती, उससे हमारी प्यास तो नहीं बुझेगी। उसे बुझाने के लिए तो हमें नल पर ही जाना पड़ेगा। कुएँ या नदी पर जाना पड़ेगा। वहाँ पर विभूति रूप में जल उपलब्ध है। वो सर्वत्र है पर विभूति रूप में प्रकट होती है।

भगवान इसलिए कहते हैं कि सभी भूतों में, चर-अचर में मेरे अतिरिक्त कुछ नहीं है इसलिए मुझसे बेहतर कुछ मत जानो, परन्तु विभूति रूप में मैं कहाँ प्रकट होता हूँ, उसका वर्णन मैंने यहाँ किया।

10.40

नान्तोऽस्ति मम दिव्यानां(म्), विभूतीनां(म्) परन्तप।
एष तूद्देशतः(फ्) प्रोक्तो,विभूतेर्विस्तरो मया॥10.40॥

हे परंतप अर्जुन ! मेरी दिव्य विभूतियों का अन्त नहीं है। मैंने (तुम्हारे सामने अपनी) विभूतियों का जो विस्तार कहा है, यह तो (केवल) संक्षेप से नामनात्र कहा है।

विवेचन - भगवान कहते हैं - हे अर्जुन! मेरी दिव्य विभूतियों का अन्त नहीं है। विभूतियाँ भी इतनी ही नहीं हैं जो मैंने तुम्हें बतलाई है।

हम कम समय में कितनी बात बता सकते हैं, इसलिए सिर्फ सङ्केत के रूप में ही थोड़ी-सी बता दी और अपनी विभूतियों का विस्तार तुम्हारे लिए संक्षेप में, एकदम थोड़े में कहा है।

10.41

यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं(म्), श्रीमद्ऊर्जितमेव वा।
तत्तदेवावगच्छ त्वं(म्), मम तेजोंऽशसम्भवम्॥10.41॥

जो-जो ऐश्वर्ययुक्त, शोभायुक्त और बलयुक्त प्राणी तथा पदार्थ हैं, उस-उसको तुम मेरे ही तेज (योग अर्थात् सामर्थ्य) के अंश से उत्पन्न हुई समझो।

विवेचन - इसलिए हे अर्जुन! जो भी विभूतियाँ, ऐश्वर्य-युक्त, कान्ति-युक्त, शक्ति-युक्त वस्तुएँ हैं, उसको तू मेरे ही तेज के अंश से, मेरी ही अभिव्यक्ति जान। यानि जब ऐसा कुछ भी हो, जब बहुत तेजस्वी दिखे, बड़ा ओजस्वी दिखे, विशेष दिखे तो मानना चाहिए कि भगवान का इसमें विशेष प्रभाव है। जब हम पूज्य स्वामी जी जैसे किसी महापुरुष को देखते हैं; जो प्रधानमंत्री जी को चम्मच से खीर खिला कर उनका उपवास तुड़वाते हैं! उस विभूति में, उनके तेज में हम भगवान का दर्शन करते हैं।

भगवान कहते हैं जो भी विभूति युक्त है, जो भी तेजस्वी युक्त दिखे, उसे तुम मेरे ही तेज की अभिव्यक्ति जानो। इसलिए हमारे यहाँ तेज का, शक्ति का, प्रभाव का सम्मान है। कोई अत्यन्त प्रभावशाली हैं तो हम कहते हैं, यह कोई श्रेष्ठ सन्त हैं तो उसे हम भगवान मानते हैं। यह परम्परा भगवान ने दी है, इसे मानना चाहिए।

10.42

अथवा बहुनैतेन, किं(ञ्) ज्ञातेन तवार्जुन।
विष्टभ्याहमिदं(ङ्) कृत्स्नम्, एकांशेन स्थितो जगत्॥10.42॥

अथवा हे अर्जुन ! तुम्हें इस प्रकार बहुत-सी बातें जानने की क्या आवश्यकता है? (जबकि) मैं (अपने किसी) एक अंश से इस सम्पूर्ण जगत् को व्याप्त करके स्थित हूँ अर्थात् अनन्त ब्रह्मांड मेरे एक अंश में है।

विवेचन -भगवान कहते हैं- हे अर्जुन! इस भाव को जानने में तेरा क्या प्रयोजन है? तुम मेरी विभूतियों की बहुत लम्बी सूची सुन भी लोगे तो उस से क्या फर्क पड़ेगा? तुम्हें उससे क्या मिलने वाला है? मेरा एक छोटा सा अंश एक सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को धारण करने में समर्थ है। मेरी विभूतियों का वर्णन तो असम्भव है। वह शब्दों में व्यक्त करना, सुनना या जानना यह किसी शक्ति की बात नहीं है। इस सम्पूर्ण जगत को मैं अपनी योग शक्ति से एक अंश मात्र में, एक छोटे से अंश में धारण करके खड़ा हूँ।

यह बात कह कर भगवान इस अध्याय का समापन करते हैं। आभूषण देखने पर सोने पर ध्यान देते हैं कि आभूषण का आकर्षण कैसा है, भगवान इस बात को कहना चाहते हैं। विभूति बतलाने का प्रयोजन यह है कि तुम्हारा ध्यान तत्त्व पर जाने लग जाए। भगवान इस अध्याय का समापन करते हैं और वेदव्यास भगवान इस अध्याय की पुष्पिका करके हम लोगों का कल्याण करते हैं।

हरि शरणम् हरि शरणम् हरि शरणम् हरि शरणम् सङ्कीर्तन के साथ विवेचन पूर्ण किया गया।

प्रश्नोत्तर

प्रश्नकर्ता - स्नेहलता दीदी
प्रश्न - इसी अध्याय में 'पुरोधसां' और 'गिरामस्मि' शब्दों का अर्थ क्या है?
उत्तर - "पुरोधसां" अर्थात् पुरोहितों में और "गिरामस्मि" अर्थात् वाणियों में।

प्रश्नकर्ता - हरीश जी
प्रश्न - भगवान और देवता में क्या अन्तर है?
उत्तर- ब्रह्मा देवता हैं और शिव और विष्णु और आदिशक्ति ब्रह्म के स्वरूप हैं। जिसका जन्म हुआ है उसकी मृत्यु होती है। ब्रह्मा जी का जन्म हुआ है और उनकी मृत्यु भी निश्चित है। अन्य देवता कालानुसार शक्ति धारण करते हैं।

प्रश्नकर्ता - हनुमान प्रसाद जी
प्रश्न - मुझे क्रोध बिलकुल नहीं आता। ऐसी स्थिति में सामने वाला अत्यधिक क्रोध करता है तो क्या करें?
उत्तर - दो ही उपाय हैं, एक विनम्रतापूर्वक उत्तर देना और दूसरा मौन रहना। फिर भी स्थिति नियन्त्रण में न हो तो उस स्थान से हट जाना उचित होगा।

प्रश्नकर्ता - अतुल जी
प्रश्न - नाम जप उच्चारण और लेखन इन दोनों में से क्या श्रेष्ठ है?
उत्तर - दोनों उत्तम हैं।

प्रश्नकर्ता - मोहनलाल जी
प्रश्न - किसी-किसी पक्ष में दो एकादशी होती हैं। गृहस्थों को कौन-सी एकादशी का व्रत करना चाहिये।
उत्तर - सामान्य रूप से गृहस्थों को जो द्वादशी से मिलनी हुई एकादशी हो और जिस एकादशी में सूर्योदय हो रहा हो वह व्रत के लिये श्रेष्ठ है। सामान्यत: दो एकादशी हो तो बाद वाली एकादशी का व्रत करना चाहिये। गृहस्थ के लिये दशमी तिथि से मिलती हुई एकादशी को कम ठीक माना गया है।

प्रश्नकर्ता- प्रहलाद भैया
प्रश्न- मन को कैसे नियन्त्रण में लाएँ?
उत्तर- भगवान ने कहा- "अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते" बार-बार अभ्यास और वैराग्य से मन नियन्त्रण में आ जाता है। हम भोगों को पकड़े रहकर भगवान को पाना चाहते हैं इसलिये भगवान हमें नहीं मिलते; हमारा मन स्थिर नहीं होता। जब भोगों की ओर से विरक्ति हो जाएगी तो मन पर नियन्त्रण होगा। यह धीरे-धीरे होता है। कुछ नियन्त्रण होता है फिर मन भटकता है। ऐसे में बार-बार प्रयास करते रहना चाहिये।

प्रश्नकर्ता - शशि दीदी
प्रश्न - भगवान ने इस प्रकार अपनी विभूतियों को क्यों कहा? क्या जिन वस्तुओं का उल्लेख नहीं किया क्या वहाँ भगवान नहीं है?
उत्तर - जहाँ पर विशेष रूप से भगवान का प्राकट्य है उनका उल्लेख किया है। भगवान ने उनतालीसवें श्लोक में कहा है कि मेरे बिना कुछ भी नहीं है, लेकिन अत्यन्त प्राकट्य विभूतियों में है।

प्रश्नकर्ता - सांध्यायनी राजशेखर दीदी
प्रश्न - गीता किसी की मृत्यु होने पर पढ़ना चाहिये या नहीं? हम सभी को अपने जैसा मानते हैं परन्तु दूसरे ऐसा व्यवहार नहीं करते हैं तो क्या करें?
उत्तर - जरूर पढ़ना चाहिये। गीता पाठ में शोच विचार की आवश्यकता नहीं। रामायण और महाभारत पढ़ लिया तो सभी शास्त्र ज्ञान प्राप्त हो जाएगा। भागवत भगवान की कथा का ग्रन्थ है। भागवत भक्ति का ग्रन्थ है। हम दूसरों को भी भागवत मानें, परन्तु यदि वह नहीं मानता है तो कोई बात नहीं। जो जैसा करता है उसे वैसा फल भगवान देते हैं।

प्रश्नकर्ता - अल्पना जी
प्रश्न - बजरंगबली भी अजर और अमर हैं। वे देवता है या ब्रह्म? दीक्षा लेने की आवश्यकता है क्या?
उत्तर - उनका जन्म अञ्जनि माता के गर्भ से हुआ इसलिये देवता हैं। ब्रह्माण्ड की समाप्ति और पुनर्निर्माण पर पुन: हनुमान जी का जन्म होगा। दीक्षा लेना आवश्यक है। गुरु मानना और दीक्षा लेने में अन्तर है। मानने से केवल में किसी को गुरु मानता हूँ, परन्तु वे मुझे शिष्य कैसे मानेंगे। दीक्षा लेने से ही यह सम्बन्ध बनता है।

प्रश्नकर्ता - मन्जुलता दीदी
प्रश्न - मैं पूजा के दौरान नाम जप नहीं कर पाती।
उत्तर - पूजा के दौरान कम से कम एक माला करना चाहिये। दिन में आपना काम करते हुए मन ही मन नाम-जप कर सकते हैं।

प्रश्नकर्ता - सन्दीप जी
प्रश्न - किसी श्रेष्ठ गुरु के अनेक शिष्य होते हैं तो वे हमें कैसे स्मरण रखेंगे?
उत्तर - पूज्य गोविन्ददेव गिरि जी जैसे श्रेष्ठ गुरु को सब स्मरण रहते हैं। आजकल मोबाईल पर दीक्षा देने वाले गुरुओं को याद न रहे तो कोई आश्चर्य नहीं।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासु उपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां(म्) योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे विभूतियोगो नाम दशमोऽध्यायः ॥

इस प्रकार ॐ तत् सत् - इन भगवन्नामों के उच्चारणपूर्वक ब्रह्मविद्या और योगशास्त्रमय श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप श्रीकृष्णार्जुनसंवाद में 'विभूतियोग' नामक दसवाँ अध्याय पूर्ण हुआ।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
आइये हम सब गीता परिवार के इस ध्येय से जुड़ जायें, और अपने इष्ट-मित्र -परिचितों को गीता कक्षा का उपहार दें।

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||
||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||